सत्य शुचि

ई-मेल:

मूल्यांकन

उस समय वह स्वयं चालती फिरती हियी थी। सुन्दरता सिफारिश थी और बड़े घर की वैदाइश उसकी योग्यता थी।

एकाएक उसे प्राइवेट फर्म के निदेशक की ओर से नोटिस प्राप्त हुआ कि कम्पनी को सम्पर्क अधिकारी के रूप में अब उनको सेवाओं की आवश्यकता नहीं है। वह तिलमिला उठी। बौखलाई-सी सीधे जनरल मैनेजर से जा उलझी।

मैडम, मुझे खुद भी आश्चर्य है कि कम्पनी ने ऐसा निर्णय क्यों लिया। किन्तु, मैं समझता हूँ कि निश्चय ही निदेशक मंडल की निगाहों में कोई आपसे अधिक योग्य कैंडिडेट होगा। थकी-हारी-सी घर लौटी वह। शाम अनमने भाव से बाल संवारने बैठी थी कि आईने में हिलमिलाते बालों की इक्का-दुक्का सफेद लकीरों ने कहा—'तुम्हारी आंखों के इर्द-गिर्द झाइयाँ पड़ने लगी हैं!...' वह उद्विग्न-सी पलटकर बिस्तर पर लेट गई। यदि पिताजी आज जिन्दा होते तो क्या निदेशक मंडल की यह जरूरत होती.

वह सुगबुगा रही थी मन ही मन।

आधार-निराधार

रिटायर होने के बाद रामबाबू शेष जीवन को ईश्वर-आराधना में बीताने की मंशा रखते थे। सारी उम्र घर की जरूरतों में रात-दिन एक करते-करते गुजार दी। अब हाथ-पैरों में जान क्षीण हो गई। इत्तेफाक से खुदा-खुदा करके कुछ ही दिन बाबूजी ने संतोष से खेलते काटे थे। वे कुछ दिन बबुआ को जहर लगने लगे।

उसकी सोच-दृष्टि में, अधिक आराम बीमारी का घर होता है। बाबूजी की तन्दुरुस्ती ठीक है। थोड़ा यही संकल्प-विकल्प करते हुए बबुआ ने बाबूजी से वार्ता की थी। लेकिन, वह बातचीत बाबूजी के कानों को न लग रही थी।

'बाबूजी' वह अतिरेक जोश में लहरा उठा, 'दुकान पर बैठना ही तो है, यहाँ बैठो, चाहे वहाँ! क्या फर्क पड़ता है। दो पैसे की आमदनी ही होगी...'